अवधपुरी में राम

0645CH01

यह कथा अवध की है। और बहुत पुरानी है। अवध में सरयू नदी के किनारे एक अति सुंदर नगर था। अयोध्या। सही अर्थों में दर्शनीय। देखने लायक। भव्यता जैसे उसका दूसरा नाम हो! अयोध्या में केवल राजमहल भव्य नहीं था। उसकी एक-एक इमारत आलीशान थी। आम लोगों के घर भव्य थे। सड़कें चौड़ी थीं। सुंदर बाग-बगीचे। पानी से लबालब भरे सरोवर। खेतों में लहराती हरियाली। हवा में हिलती फ़सलें सरयू की लहरों के साथ खेलती थीं। अयोध्या हर तरह से संपन्न नगरी थी। संपन्नता कोने-अंतरे तक बिखरी हुई। सभी सुखी। सब समृद्ध। दु:ख और विपन्नता को अयोध्या का पता नहीं मालूम था। या उन्हें नगर की सीमा में प्रवेश की अनुमति नहीं थी। पूरा नगर विलक्षण था। अद्‌भुत और मनोरम।

उसे ऐसा होना ही था। वह कोसल राज्य की राजधानी था। राजा दशरथ वहीं रहते थे। उनके राज में दु:ख का भला क्या काम? राजा दशरथ कुशल योद्धा और न्यायप्रिय शासक थे। महाराज अज के पुत्र। महाराज रघु के वंशज। रघुकुल के उत्तराधिकारी। रघुकुल की रीति-नीति का प्रभाव हर जगह दिखाई देता था। सुख-समृद्धि से लेकर बात-व्यवहार तक। लोग मर्यादाओं का पालन करते थे। सदाचारी थे। पवित्रता और शांति हर जगह थी। नगर में भी। लोगों के मन में भी।

राजा दशरथ यशस्वी थे। उन्हें किसी चीज़ की कमी नहीं थी। राज-सुख था। कमी होने का प्रश्न ही नहीं था। लेकिन उन्हें एक दु:ख था। छोटा सा दु:ख। मन के एक कोने में छिपा हुआ। वह रह-रहकर उभर आता था। उन्हें सालता रहता था। उनके कोई संतान नहीं थी। आयु लगातार बढ़ती जा रही थी। उनकी तीन रानियाँ थीं– कौशल्या, सुमित्रा और कैकेयी। रानियों के मन में भी बस यही एक दु:ख था। संतान की कमी। जीवन सूना-सूना लगता था। राजा दशरथ से रानियों की बातचीत प्राय: इसी विषय पर आकर रुक जाती थी। राजा दशरथ की चिंता बढ़ती जा रही थी।
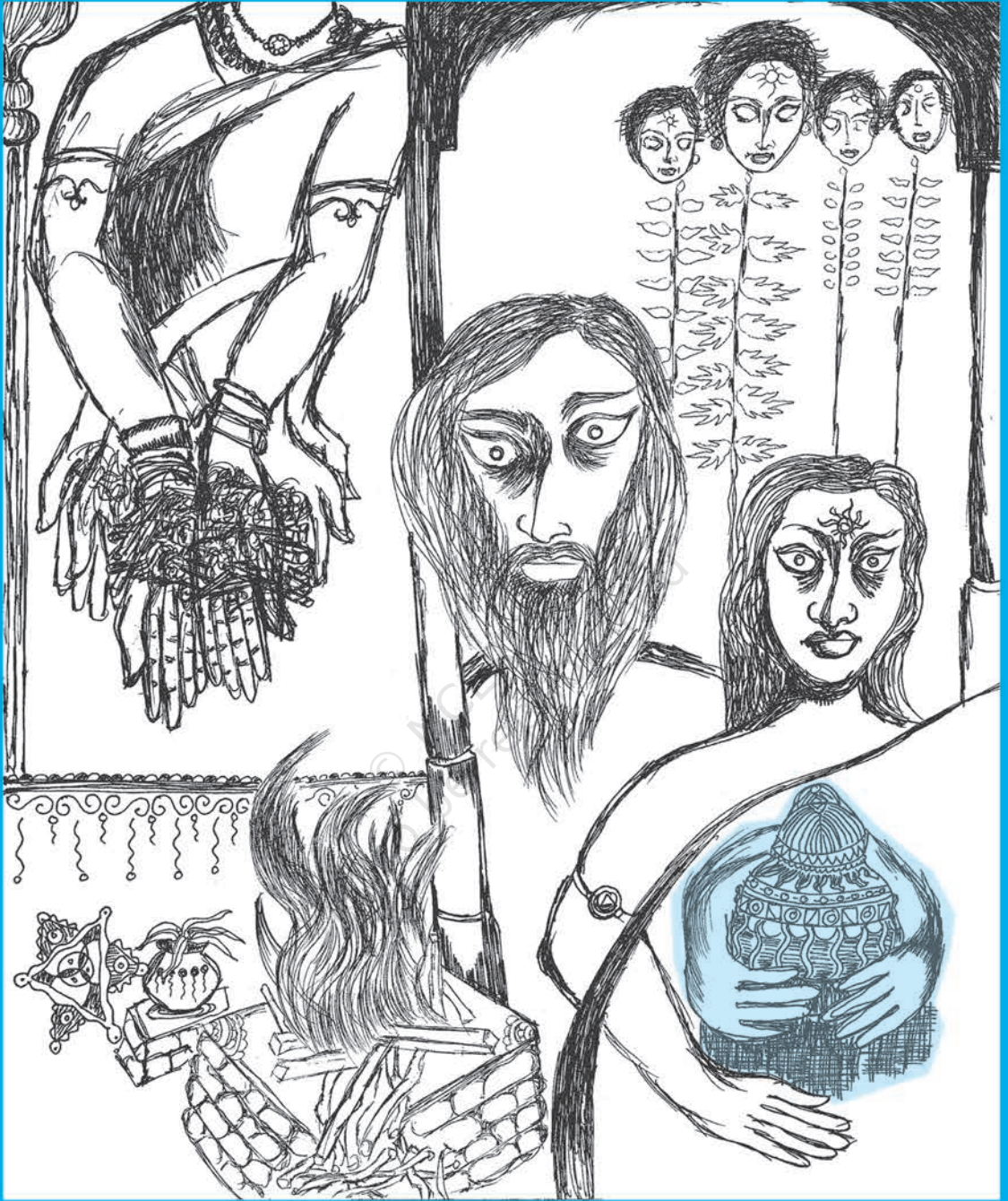
बहुत सोच-विचारकर महाराज दशरथ ने इस संबंध में वशिष्ठ मुनि से चर्चा की। उन्हें पूरी बात विस्तार से बताई। रघुकुल के अगले उत्तराधिकारी के बारे में अपनी चिंता बताई। मुनि वशिष्ठ राजा दशरथ की चिंता समझते थे। उन्होंने दशरथ को यज्ञ करने की सलाह दी। पुत्रेष्टि यज्ञ। महर्षि ने कहा, "आप पुत्रेष्टि यज्ञ करें, महाराज! आपकी इच्छा अवश्य पूरी होगी।"

यज्ञ महान तपस्वी ऋष्यश्रृंग की देखरेख में हुआ। पूरा नगर उसकी तैयारी में लगा हुआ था। यज्ञशाला सरयू नदी के किनारे बनाई गई। यज्ञ में अनेक राजाओं को निमंत्रित किया गया। तमाम ऋषि-मुनि पधारे। शंखध्वनि और मंत्रोच्चार के बीच एक-एक कर सबने आहुति डाली। अंतिम आहुति राजा दशरथ की थी।

यज्ञ पूरा हुआ। अग्नि के देवता ने महाराज दशरथ को आशीर्वाद दिया। कुछ समय बाद दशरथ की इच्छा पूरी हुई। तीनों रानियाँ पुत्रवती हुईं। महारानी कौशल्या ने राम को जन्म दिया। चैत्र माह की नवमी के दिन। रानी सुमित्रा के दो पुत्र हुए। लक्ष्मण और शत्रुघ्न। रानी कैकेयी के पुत्र का नाम भरत रखा गया।

राजमहल में खुशी छा गई। नगर में बधाइयाँ बजने लगीं। मंगलगीत गाए गए। हर ओर खुशी। उत्सव जैसा दृश्य। राजा दशरथ प्रसन्न थे। उनकी मनोकामना पूरी हुई। प्रजा प्रसन्न थी कि दशरथ की चिंता दूर हुई। नगर में बड़ा समारोह आयोजित किया गया। धूमधाम से। आयोजन में दूर-दूर से लोग आए। राजा दशरथ ने सबको पूरा सम्मान दिया। उन्हें कपड़े, अनाज और धन देकर विदा किया।

चारों राजकुमार धीरे-धीरे बड़े हुए। वे बहुत सुंदर थे। सुदर्शन। साथ खेलने निकलते तो लोग उन्हें देखते रह जाते। आँखें उनसे हटती ही नहीं थीं। चारों भाइयों में आपस में बहुत प्रेम था। वे अपने बड़े भाई राम की आज्ञा मानते थे। खेलकूद में लक्ष्मण प्राय: राम के साथ रहते। भरत और शत्रुघ्न की एक अलग जोड़ी थी।

और बड़े होने पर राजकुमारों को शिक्षा-दीक्षा के लिए भेजा गया। उन्होंने कुशल और अपनी विद्या में दक्ष गुरुजनों से ज्ञान अर्जित किया। शास्त्रों का अध्ययन किया। शस्त्र-विद्या सीखी। चारों राजकुमार कुशाग्र-बुद्धि थे। जल्द ही सब विद्याओं में पारंगत हो गए। राम इसमें सर्वोपरि थे। उनमें कई अन्य गुण भी थे। विवेक, शालीनता और न्यायप्रियता। राजा दशरथ को राम सबसे अधिक प्रिय थे। ज्येष्ठ पुत्र होने के कारण। और इन मानवीय गुणों के कारण भी।

राजकुमार कुछ और बड़े हुए। विवाह योग्य। नगर में इसकी चर्चा होने लगी। महाराज दशरथ भी ऐसा ही चाहते थे। अपनी संतानों के लिए सुयोग्य वधुएँ। परिजनों में चर्चा पहले से ही हो रही थी। बाद में पुरोहितों को भी इसमें शामिल कर लिया गया।

अयोध्या का राजमहल। एक दिन ऐसी ही चर्चा चल रही थी। गहन मंत्रणा। तभी एक द्वारपाल घबराया हुआ अंदर आया। उसने सूचना दी कि महर्षि विश्वामित्र पधारे हैं। महाराज दशरथ तत्काल अपना आसन छोड़कर खड़े हो गए। द्वार की ओर बढ़े। महर्षि की अगवानी करने। उन्हें लेकर दरबार में आए। विश्वामित्र को ऊँचा आसन दिया गया।

विश्वामित्र कभी स्वयं राजा थे। बहुत बड़े और बलशाली। बाद में अपना राजपाट छोड़ दिया। संन्यास ग्रहण कर लिया। जंगल चले गए। वहीं उन्होंने अपना आश्रम बनाया। उसे उन्होंने सिद्धाश्रम नाम दिया।

महर्षि के स्वागत-सत्कार के बाद दशरथ ने कहा, "महर्षि, आज्ञा दें, मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ। आप अपने मन की बात कहिए। आपकी आज्ञा का पूरी तरह पालन होगा।"

"राजन! मैं जो माँगने जा रहा हूँ उसे देना आपके लिए कठिन होगा।"

"आप आज्ञा दीजिए, महर्षि! मैं उसे पूरा करने के लिए तत्पर हूँ। बिलकुल नहीं हिचकूँगा।"

"मैं सिद्धि के लिए एक यज्ञ कर रहा हूँ। अनुष्ठान लगभग पूरा हो गया है। लेकिन दो राक्षस उसमें बाधा डाल रहे हैं। मैं जानता हूँ कि उन राक्षसों को केवल एक ही व्यक्ति मार सकता है। वह राम हैं। आप अपने ज्येष्ठ पुत्र को मुझे दे दें ताकि यज्ञ पूरा हो," विश्वामित्र ने कहा।

दशरथ पर जैसे बिजली गिर पड़ी। वह अचकचा गए। उन्हें उम्मीद ही नहीं थी कि मुनिवर उनसे राम को माँग लेंगे। उनके ज्येष्ठ पुत्र। उनके सबसे प्रिय। दशरथ चिंता में पड़ गए।

विश्वामित्र दशरथ की दुविधा समझ रहे थे। उन्होंने कहा, "मैं राम को केवल कुछ दिनों के लिए माँग रहा हूँ। यज्ञ दस दिन में संपन्न हो जाएगा।" महाराज दशरथ दु:खी हो गए। पुत्र-वियोग की आशंका से काँप उठे। दरबार में सन्नाटा छा गया। दशरथ की दशा देखकर मंत्री चिंतित थे। पर चुप थे। महर्षि वशिष्ठ शांत थे। इतने में दशरथ काँप कर बेहोश हो गए। होश आया तो डर ने उन्हें फिर जकड़ लिया। मूर्च्छित होकर दोबारा गिर पड़े। संज्ञा-शून्य पड़े रहे।

महर्षि विश्वामित्र का क्रोध बढ़ता जा रहा था। दरबार सशंकित था। किसी अनिष्ट की आशंका से। वे कुछ समझ नहीं पा रहे थे। महर्षि और महाराज के बीच संवाद में कुछ बोलना उचित भी नहीं था। मुनि वशिष्ठ चुपचाप आकर महाराज दशरथ के पास खड़े हो गए।

थोड़ी देर बाद दशरथ उठे। स्वयं को सँभालते हुए उन्होंने महर्षि से विनती की, "महामुनि! मेरा राम तो अभी सोलह वर्ष का भी नहीं हुआ है। वह राक्षसों से कैसे लड़ेगा? राक्षस मायावी हैं। वह उनका छल-कपट कैसे समझेगा? उन्हें कैसे मारेगा? इससे अच्छा तो यही होगा कि आप मेरी सेना ले जाएँ। मैं स्वयं आपके साथ चलूँ। राक्षसों से युद्ध करूँ।"

महर्षि विश्वामित्र ने कोई प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं की। क्रोधित थे, पर उसे व्यक्त नहीं कर रहे थे। उन्हें अपने यज्ञ के नियम याद थे। क्रोध करने से यज्ञ खंडित हो जाता। अनुष्ठान अधूरा रह जाता।

"मैं राम के बिना नहीं रह सकता, महामुनि! एक पल भी नहीं। आप राम को छोड़कर जो चाहें माँग लें। उसे मत ले जाइए। मैं राम को नहीं दूँगा। बिलकुल नहीं। वह मेरी बुढ़ापे की संतान है। मैं उससे बहुत प्रेम करता हूँ।"

महर्षि का क्रोध भभक उठा। दरबार, मंत्रीगण और ऋषि-मुनि सकते में आ गए। "आप रघुकुल की रीति तोड़ रहे हैं, राजन। वचन देकर पीछे हट रहे हैं। यह बरताव कुल के विनाश का सूचक है। आप जानते हैं कि मैं स्वयं दुष्ट राक्षसों का संहार कर सकता था। लेकिन मैंने संन्यास ले लिया है। अगर आप राम को नहीं देंगे तो मैं यहाँ से खाली हाथ लौट जाऊँगा।"

बात बिगड़ती देखकर मुनि वशिष्ठ आगे आए। महाराज दशरथ को समझाया। राम की शक्ति के बारे में। प्रतिज्ञा तोड़ने के संबंध में। महर्षि विश्वामित्र के साथ रहने पर राजकुमार राम को होने वाले लाभ के बारे में।

"राजन, आपको अपना वचन पूरा करना चाहिए। रघुकुल की रीति यही है। प्राण देकर भी आपके पूर्वजों ने वचन निभाया है। आप राम की चिंता न करें। महर्षि के होते उनका कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता।"

महाराज दशरथ की चिंता कुछ कम हुई। पर मन अब भी खिन्न था। पुत्र-बिछोह का दु:ख सभी तर्कों पर भारी पड़ रहा था।

गुरु वशिष्ठ ने कहा, "महाराज, महर्षि विश्वामित्र सिद्ध पुरुष हैं। तपस्वी हैं। अनेक गुप्त विद्याओं के जानकार हैं। वह कुछ सोचकर ही यहाँ आए हैं। राम उनसे अनेक

नयी विद्याएँ सीख सकेंगे। आप राम को महर्षि विश्वामित्र के साथ जाने दें। राम को उन्हें सौंप दें।"

दशरथ ने मुनि वशिष्ठ की बात दुःखी मन से स्वीकार कर ली। लेकिन वह राम को अकेले नहीं भेजना चाहते थे। उन्होंने विश्वामित्र से आग्रह किया। कहा कि वे राम के साथ उनके छोटे भाई लक्ष्मण को भी ले जाएँ। महर्षि विश्वामित्र ने महाराज दशरथ का यह आग्रह स्वीकार कर लिया।

राम और लक्ष्मण को तत्काल दरबार में बुलाया गया। महाराज दशरथ ने उन्हें अपने निर्णय की सूचना दी। दोनों भाइयों ने उसे सहर्ष स्वीकार कर लिया। सिर झुकाकर। आदर सहित।

इसकी सूचना माता कौशल्या को दी गई। बताया गया कि राम और लक्ष्मण वन जा रहे हैं। महर्षि विश्वामित्र के साथ। नितांत गंभीर माहौल में स्वस्तिवचन हुआ। शंखध्वनि हुई। नगाड़े बजे। महाराज दशरथ ने भावुक होकर दोनों पुत्रों का मस्तक चूमकर उन्हें महर्षि को सौंप दिया।

दोनों राजकुमार बिना विलंब किए महर्षि के साथ चल पड़े। बीहड़ और भयानक जंगलों की ओर। विश्वामित्र आगे-आगे चल रहे थे। राम उनके पीछे थे। लक्ष्मण राम से दो कदम पीछे। अपने धनुष सँभाले हुए। पीठ पर तुणीर बाँधे। कमर में तलवारें लटकाए।